❀ विषय-सूची ❀

क्रमांक	विषय	लेखक	पृष्ठ
१	हमारी बात	(सम्पादक)	२
२	प्रार्थना	(दाता दयाल)	३
३	गुंजा माली जी की कथा	(दाता दयाल)	४
४	शब्द	,,	५
५	कर्म योग अथवा मौज	(परम दयाल जी महाराज)	५
६	शब्द कबीर साहब	(कबीर साहब)	८
७	कर्म भोग अथवा मौज	(परमदयाल जी)	८
८	वैशाखी दिवस	,,	१५
९	अमूल्य उपदेश	(दयाल नन्दू भाई जी)	१६
१०	कर्ममोग अथवा मौज	(परम दयाल जी महाराज)	१८
११	ग़ज़ल	(पीरेमुग़ाँ साहब)	२२
१२	कर्म भोग अथवा मौज	(परम दयाल जी महाराज)	२२
१३	कलाम	(दाता दयाल)	२५
१४	प्रार्थना	(दाता दयाल जी)	३१
१५	शब्द महिमा	(दाता दयाल जी)	३२
१६	कर्मभोग अथवा मौज	(परम दयालजी महाराज)	३३
१७	,,	,,	३६
१८	कर्मभोग अथवा मौज	(परम दयाल जी महाराज)	३६
१९	कलाम	(दाता दयाल)	३९
२०	ग़ज़ल	,,	४०

प्रकाशक—मुन्शीलाल गोविल, दयाल कम्पाउण्ड, अलीगढ़।

मुद्रक—प्यारेलाल भा, चित्रा प्रिंटिंग प्रेस, अलीगढ़

* हमारी बात *

पाप की पोट डही जब ही, जब गुरु के सम्मुख शीस झुकायो।
परम दयाल ने दया करी अति, दीन दुखी को अङ्ग लगायो।।
मन मूरख अबहू नहीं समझत, बड़े भाग्य से दर्शन पायो।
कहे विश्व प्रेमी 'मनुष्य बनो' तुम, फिर सतगुरु सब, काम बनायो।।

न देते काम वह हमको, तो फिर कैसे 'मनुष्य' बनते।
बिना अभ्यास साधन के, न यह बनते न वह बनते।।
उन्हीं की यह इनायत है, फ़ज़ल है और करम 'खुश दिल'।
निकाला इसके चक्कर से, बिगड़ते गर जो हम बनते।।

नहीं ख्वाहिश रही दिल में, अब बनने बिगड़ने की।
गुरु ने गुत्थी सुलझाई, कही निष्काम करने की।।
उन्हीं की मौज ही हमसे, यह सब करती कराती है।
निडर होकर करो तुम काम, जरूरत क्या है डरने की।।

निर्भय रहो। अचिंत रहो। खूब काम करो। परन्तु वह निष्काम कर्म हो। तब जीवन सफल होगा और निर्च्छित हो जाओगे। जब कोई इच्छा ही नहीं रही तो फिर भवसागर से बेड़ा पार है। यह हैं गुरु के वाक्य जो अब हमारे हो रहे हैं। चूँकि हमें इन्हीं से काम रहता है, इसलिये इनको हम 'हमारी बात'के नाम से प्रति मास आप तक पहुँचाते रहते हैं। फिर भी आप महानुभाव इस ओर कान नहीं देते। सहयोग देना तो बहुत दूर रहा। अभी तक अधिक संख्या ऐसी है जिन्हें वार्षिक मूल्य भेजना है। परन्तु नहीं सुनाई करते। वह दो दो नवीन ग्राहक तो क्या बनायेंगे। परन्तु हमतो सब के ही गुण गायेंगे। विश्व प्रेमी ही जो ठहरे। सतगुरु सब का कल्याण करें। और ऐसी सुमति प्रदान करें जो इस काल बलि से छुटकारा मिले।

जो लाख झुकाया सर तो क्या, यों मत्थे टेके लाखों क्या।
जो गुरु का असली मंशा है, ऐ दोस्त बड़ा वह मुशकिल है।।

मनुष्य बनो

ओ३म् पूर्णमिदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मुदच्यते ।।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

वर्ष १० | मई १९६२]वैशाख, ज्येष्ठ मासे-वि० २०१९ | [सं० ८।११६

* प्रार्थना *

चरण कमल में शीस झुकाऊँ, नित सत्गुरु गुण गाऊँ ।
तन मन सब अरपूं चित हित से, निस दिन ध्यान लगाऊँ ।।
जागूं तो गुरु का रहे सुमिरन, सोऊँ तो लव लाऊँ ।
गहरी नींद में लय चिंतन कर, आपा आप भुलाऊँ ।।
तुरिया तुरियातीत रहूँ जब, मन में रूप बसाऊँ ।
सोवत जागत रूप न त्यागूँ, ऐसी ताड़ी लाऊँ ।।
गुरु मेरे अगम अपार अमाया, दान दया का पाऊँ ।
भक्ति भाव उर बसे निरन्तर, और सकल बिसराऊँ ।।
गुरु की बानी अगम ठिकानी, समझ समझ हरषाऊँ ।
जो कोई पूछे जिज्ञासू बन, प्रेम से ताहि सुनाऊँ ।।
गुरु की कृपा साध की संगत, बुद्धि विवेक बढ़ाऊँ ।
निज स्वरूप का दर्शन पाकर, औरन को दरसाऊँ ।।
भेद-भाव का संशय मेंटूं, भरम विकार नसाऊँ ।
साँईं मेहर करो कुछ ऐसी, सब को मरम बताऊँ ।।
जीव दुखारी तीन ताप से, सुख का भेद लखाऊँ ।
सुमिरन ध्यान भजन की क्रिया, जानूँ जान बताऊँ ।।
बिनती सुनो दयानिधि मेरी, आऊँ कहूं न जाऊँ ।
राधास्वामी चरण शरण बलिहारी, प्रेम प्रीति उमगाऊँ।।

गुञ्जा मालीजी की कथा (दाता दयाल)

गुञ्जा मालीजी लाहौर के रहने वाले थे। बाल चरित्र की भक्ति प्यारी थी। अकस्मात उनके पुत्र की मृत्यु हो गई। वैराग्य उत्पन्न हुआ। वृन्दावन में रहने और भक्ति करने का संकल्प किया।

पुत्र बधू को धन द्रव्य देने लगे। वह स्वयं भक्तिन थी बोली "अपनी पूजा की मूर्ति दे दो। मैं उसकी पूजा करूँगी। यह समस्त धन द्रव्य से अधिक मूल्यवान है"। उन्होंने ऐसा ही किया। मन में प्रसन्न हुये। मूर्ति दी। घर बार उसे सौंपा और वृन्दावन चले आये।

बहुधा बाल गोपाल इस पुत्र बधू के घर आकर खेला करते थे। लड़के स्वाभाविक नटखट और खिलाड़ी होते ही हैं। एक दिन खेल-खेल में कूड़े की टोकरी कृष्णजी की मूर्ति पर डाल दी। बधू बहुत क्रोधित और अप्रसन्न हुई। बच्चों को घर आने से मना कर दिया। जब भोग लगाने बैठी। वह अस्वीकार हुआ। चिंतित हुई। भगवान से अप्रसन्नता का कारण पूछा। उत्तर मिला तूने मेरे साथियों को पृथक कर दिया। इस कारण मुझे दुख है।

यह बोली, "बहुत अच्छा। यदि यही स्वीकार है तो एक पर क्या निर्भर है दो चार टोकरे आप पर डाल दिये जायेंगे भोग तो लगाइये।" यह बोले "नहीं। जब तक मेरे साथी नहीं आयेंगे। भोग लगाना स्वीकार नहीं है। वह मुझे प्रिय हैं। मेरे साथ खेलते हैं। प्रेम रखते हैं। उनकी मूर्खता और असभ्यता भी मेरी दृष्टि में सब से बड़ी पूजा है। उन्हें आने दे तब मैं प्रसन्न हूंगा।"

बेचारी लड़कों के घर गई। मिष्ठान देकर उन्हें प्रसन्न किया। और जब वह आये तब भोग लगा। उसके पश्चात उसने बच्चों की फिर कभी रोक टोक नहीं की।

इधर बधू पर भक्ति का गहरा रंग जमा। उधर गुञ्जामाली प्रेम की लाली से लाल होगये और दोनों कृष्ण के प्यारे भक्त बनगये।

एक प्रेम विश्वास का नाता, और न नाता मानूँ।
सच्चे भाव से जो मुझे पूजे, प्रेमी उस को जानूँ॥
तीरथ विरत नियम और धर्मा, सब फोकट व्यौहारा।
एक प्रेम को चाह है मुझ को, प्रेम भक्ति का सारा॥
त्यागो छल बल और स्यानप, प्रेम हृदय में लाओ।
राधास्वामी प्रेम की मूर्ति, प्रेम की भेंट चढ़ाओ॥

शब्द (दाता दयाल)

वह बच गया इस भवसागर से, सतगुरु ने जिसको तार दिया।
जिसे गुरु की संगत नहीं मिली, उसे काल कर्म ने मार दिया॥
हुआ भाग उदय मेरा सजनी, मैं आ गई सतगुरु की शरनी।
सतसंग के वचन अमोल सुनाकर, तत्त्व के सार का सार दिया॥
माया का जाल बहुत भारी, जो फँस गया हो रहा संसारी।
शुभ अशुभ कर्म के बदले में, यमराज ने कारागार दिया॥
त्रै ताप महा है दुखदाई, मुक्ती मिलनी है कठिनाई।
जो भरमा भूला, जग ने उसके, सिर पर दुख का भार दिया॥
राधास्वामी परम सन्त आये, निज दया से मुझको अपनाये।
हिये में थी दबी प्रेम अगनी, कृपा से उसे उद्‌गार दिया॥

कर्मभोग अथवा मौज (परम दयाल जी महाराज)

ज़िन्दगी ने तलाश की अपने मर्कज़ो आधार की,
अब यह पहुंची उस जगह जहाँ नहीं खुद ही रही।
सुम बकुम होकर के फिरती है अब संसार में,
क्या ख़बर दिमाग़ की हालत ही हो बिगड़ गई।
होश में आ करके देखता हूँ इस संसार को,
खारजी असरात पड़ते फिर होश में आ लिख रही।

आज समाचार पत्र में किसी ने आकर दिखाया कि कुम्भ के मेले पर हरिद्वार में साधु सम्मेलन हो रहा है। और शासन के कुछ मन्त्रियों का भी इसमें हाथ है।

इस साधु अथवा सन्त आदि के शब्दों ने मुझे इस मेरी वर्तमान दशा में पहुँचाया है। ज्ञात नहीं, मौज ने जहाँ पहुँचाया वह सत्य मार्ग है अथवा असत्य। साधु सन्त की महिमा सुनता था। स्वयम् सन्त अथवा परम सन्त अवस्था को प्राप्त करने की एक प्रबल इच्छा थी। क्या यही अवस्था जहाँ कि मैं स्वयं और संसार को भूल जाता हूँ और एक सर्वव्यापी अस्तित्व में चला जाता हूँ यही सन्त अथवा परम सन्त पद है अथवा एक प्रकार की मस्तिष्क की त्रुटि है। जो जो कुछ दाता ने आज्ञा दी उसका पालन किया। साधन अभ्यास में अपनी ओर से कोई कसर नहीं छोड़ी। यदि त्रुटि भी हो तो उसका मैं उत्तरदायी नहीं।

जब कभी चैतन्यता आजाती है, वही निवास स्थान, धन-सम्पत्ति सन्तान और संसार का भान होता रहता है और वाह्य प्रभावों के अनुसार मौज कार्य कराती है और बस फिर भूल जाता हूँ।

चूँकि पुराने संस्कार जगत कल्याण आदि के मस्तिष्क पर पड़े हुए हैं इसलिये विचार आया कि साधु सन्त अथवा फ़क़ीर वास्तव में संसार का कल्याण कर सकते हैं अथवा नहीं।

इतिहास बताता है कि शासनों के संरक्षक संस्थापक साधारणतः साधु, सन्त और ऋषि ही हुए हैं। उनकी विचारधारा राजाओं और महाराजाओं में विद्यमान रही और वह कार्य कर गये। उदाहरणतः सम्राट अशोक, जिनके मस्तिष्क में गौतमबुद्ध की शिक्षा के संस्कार थे। ऐसे ही और भी उदाहरण हैं। महात्मा गांधी यद्यपि सन्त नहीं थे परन्तु धार्मिक विचारवान थे। जैन मत, बौद्ध मत के संस्कारों से प्रभावित राजाओं ने अपने अपने समय में अधिक कार्य किया है। इसी प्रकार इस वर्तमान युग में जब तक शासन साधु सन्त तथा फ़कीरों के संस्कारों के अनुसार साधन सम्पन्न नहीं होगा, देश में शान्ति और सौख्य का आना असम्भव है। ईसाईयों ने यदि

उन्नति की और राज्य को बढ़ाया तो केवल ईसामसीह के संस्कारों के कारण।

इसलिये संसार की वर्तमान आपत्तियों को देखता हुआ अपने कर्म भोगवश कह रहा हूँ कि सच्चे साधु सन्तों अथवा ऋषियों की शिक्षा के अन्तर्गत आओ। और इस शिक्षा को फैलाना साधुओं और सतपुरुषों आदि का कार्य है। किन्तु साधु सन्त की प्रशंसा मेरी समझ में यह है कि साधु सन्त वह हैं जो निराश्रित और अपनी इन्द्रियों पर अधिकार रखने वाले, सबको अपने समान मनुष्य समझने वाले मानसिक और आत्मिक प्रकृति को जानने वाले और अपने निज स्वरूप अथवा उस मालिक में रहने वाले हैं।

मन चाहता है कि इस शिक्षा को व्यक्त करूँ किन्तु सुरत नीचे आने को नहीं चाहती। इतना कहता हूँ, वो भी अपने कर्मभोग वश अथवा मौजाधीन कि:—"मनुष्य बनो"।

यदि वास्तव में किसी साधु अथवा सन्त में शक्ति होती है जैसा कि सुना अथवा पढ़ा करता था और मैं साधु अथवा सन्त हो गया हूं तो मैं चाहता हूं :—

भारतवर्ष में मानवता आये। भारतवासी सुखी हों। अपने जीवन की यात्रा को प्रेम और प्रसन्नतापूर्वक व्यतीत कर लक्ष को प्राप्त करें। यदि ऐसा संस्कार भारतवर्ष में फैल गया तो यह सत्य होगा कि साधु अथवा सन्त कुछ कर सकते हैं वरन् मुझे जो कुछ मिला वह कह चला हूँ। मुझे क्या मिला है ?

दौड़त-दौड़त दौड़िया, जहाँ लग मन की दौड़।
दौड़ थका मन थिर भया, वस्तु ठौर की ठौर॥

अनामपने से हस्ती बन कर इन्सानी सूरत में आगई।

लौटी वह फिर जात में, और जात में समा गई॥

यह मिला हम को ऐ मित्रो, कर्म भोगवश कह चले।
काम अपना कर चले हैं, मौज के हो आसरे॥

संस्कार था इक मिला हमें, जगत के कल्याण का।
जो कुछ समझा राज़ हमने, वह तहरीरों में ला चले॥
कब तक है जीवन, इस जहाँ में मालूम नहीं।
आज्ञा दाता की मित्रो, हम पूरी हाँ कर चले॥
आने वाली नस्लें, गर हममें सदाक़त और सचाई है।
आमिल होंगी काम करेंगी, हमतो अपना खेल खतम करचले॥
राधास्वामी दयाल दाता, सतगुरु को है प्रणाम।
जो काम दिया था उस ज़ात ने, वो काम अपना करचले॥

इसलिये धन्य हैं भारतवासी! जहाँ सच्चे साधु और सच्चे सन्त प्रगट होकर जगत का कल्याण करने के लिये एकत्रित होते हैं। प्राणीमात्र को शान्ति।

शब्द कबीर साहब

पहली भिक्षा अन्न की लाना, गाँव नगरिया पास न जाना।
हिन्दू मुसलिम छोड़ के लाना, लाना झोली भर के॥
दूजी भिक्षा मांस की लाना, जीव जन्तु के पास न जाना।
ज़िन्दा मुर्दा छोड़ के लाना, लाना हांडी भर के॥
तीजी भिक्षा जल की लाना, कुआँ बावरी पास न जाना।
ताल तलैया छोड़ के लाना, लाना मटका भर के॥
चौथी भिक्षा लकड़ी लाना, रूख वृक्ष के पास न जाना।
गीली सूखी देख के लाना, लाना गट्ठर भर के॥

कर्मभोग अथवा मौज (परम दयाल जी महाराज)

कल होशियारपुर में एक पंथ के पूज्य गुरुदेव (महात्मा) पधारे। नगर में दो-तीन द्वार, उनका चित्र और विज्ञापन लगाये गए। विज्ञापन में लिखा हुआ था कि ये महापुरुष अवतार हैं। और अधिक समय के पश्चात प्रगट होकर गुरु नानक, श्री कृष्ण और ईसामसीह की शिक्षा का प्रचार करते हैं। हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान, ईसाई आदि धर्मों से पृथक होकर मनुष्य बनाने अथवा मनुष्यता का

प्रचार करते । साथ ही नीचे लिखा हुआ था "कि ये ईश्वर के दर्शन करा देते हैं और सहस्रो व्यक्ति मुक्त हो गए" आदि-आदि।

मुझे अपने जीवन का अनुभव सम्मुख आया क्योंकि मैंने भी उस मालिक के प्रेम व भक्ति में जीवन व्यतीत करने के पश्चात मनुष्य बनो की पुकार की है।

ईश्वर के दर्शनों के सम्बन्ध में मेरे मन में विभिन्न धर्मों-पन्थों के संस्कार रहे हैं। वो क्या दर्शन कराते हैं मुझे ज्ञात नहीं। इस विचार में समस्त रात्रि उस मालिक के स्मरण में व्यतीत हुई और अब प्रातः उठ कर अपने कर्म भोग वश अथवा मौज आधीन अथवा संसार के कल्याण हेतु लिख रहा हूँ। चूँकि यह मेरा कर्तव्य है इसलिये विवशता है।

ईश्वर दर्शन

अपने निज अनुभव के आधार पर कहता हूं जिसका कि मैंने अपने सतसंगों व लेखों में वर्णन किया है।

किसी ने मूर्ति में ईश्वर को माना जैसे धन्ना भक्त और नामदेव ने

किसी ने किसी पुरुष में उसको माना जैसे मीराबाई आदि ने।

किसी ने गुरु स्वरूप में माना जैसे रायबहादुर हुजूर सालिगराम जी ने स्वामी जी महाराज को माना अथवा मैंने माना।

किसी ने उसको प्रकाश स्वरूप माना किसी ने उसे शब्द स्वरूप माना।

प्रत्येक प्राणी को उसके अपने ही विश्वास और श्रद्धा के अनुसार जैसा किसी ने माना वैसा फल पाया अथवा उसको समझा। किसी ने आनन्द स्वरूप समझा तात्पर्य यह है कि प्रत्येक ने उसके दर्शन अपने श्रद्धा भाव और विश्वास से किये।

किन्तु वास्तविकता क्या है कि वह वास्तविक और सच्चा ईश्वर और है जो कि संसार की रचना का आधार है अथवा जिससे रचना होती है। यदि वेदान्त के विचार से यह मान लिया जाय कि

प्राणी का अपना आपा अथवा आत्मा ही ईश्वर है तो प्रत्येक व्यक्ति में प्रत्येक प्रकार की शक्ति होनी चाहिये। जो वह चाहे करे। चूँकि ऐसा नहीं होता इसलिए प्रत्येक साधारण बुद्धि वाला प्राणी कैसे मान ले कि मनुष्य ही ईश्वर है। यदि हम ईश्वर को न माने तो भी मानवीय बुद्धि इस विचार को स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं है क्योंकि यह संसार है, इसका रचियता कोई अवश्य है।

जब तक मनुष्य उस ईश्वर तक जो इस रचना का आधार है नहीं जाता यह असम्भव है कि वह इस रचना अथवा जीवन को समाप्त कर सके। दूसरे शब्दों में वह किसी दशा में भी अपनी आन्तरिक कुरेद को मिटा सकेगा और आवागमन के चक्र से बच सवेगा। पढ़ने वाले चकित होंगे कि मैंने क्या कहा है ? किन्तु जो कुछ कहा वह निज अनुभव है। उसके प्रमाण में सत्त कबीर का शब्द सुनाता हूं।

प्रथम प्रमाण सत्त कबीर की वाणी है। महिमा आदि धाम।
सखिया वा घर सबसे न्यारा। जहाँ पूर्ण पुरुष हमारा॥

इसलिये जब तक मानवीय सुरत उस मालिक के दरबार में न जायगी जिसका उल्लेख सत्त कबीर ने किया है। उसका आना जाना समाप्त न होगा और न आन्तरिक कुरेद ही। यह दूसरी बात है कि आवागमन ऊँचे लोकों में हो। और यह तब हो सकता है जब कि मानवीय सुरत अपने आपको उस ईश्वर से जिसको मनुष्य की अपनी आत्मा बनाती है और उसकी आराधना करता है। इस को छोड़ दो।

अब प्रश्न यह है कि उस मालिक और सच्चे ईश्वर के दरबार में कैसे जाया जाय ? इसका उत्तर साधारण है। उस ईश्वर को ढूँढो जिसने तुम्हारी उत्पत्ति की है। बल्कि उस ईश्वर को न पूजो जिसको तुम मानते हो अथवा बनाते हो। दूसरे शब्दों में अपने आपसे ऊपर जाओ।

तुम कौन हो ! तुम एक चेतन्य के बुलबुले हो अथवा सुरत हो जिसमें बोधभान अथवा किसी प्रकार की चेतनता की शक्ति है। इस लिए जबतक तुम्हारी अपनी चेतनता की शक्ति समाप्त न होगी तुम उस वास्तविक और सच्चे ईश्वर का दर्शन न कर सकोगे। किन्तु उस वास्तविक ईश्वर से मिलना कौन चाहता है ? हमारा जीवन तो इस जीवन के सांसारिक खेलों में फँसा हुआ है। इस जीवन की आकर्षण शक्ति हमको सदैव अपनी ओर खींचे रखती है। इस लिए ये जितने मत मतांत्र—धर्म, पन्थ, सम्प्रदाय हैं समस्त प्राणी को वास्तविक ईश्वर से मिलने नहीं देते।

मैं स्वयं ईश्वर भक्त और उसका पुजारी रहा हूँ। और अब भी हूं यद्यपि रूप बदल गया है। जीवन का अनुभव मुझे विवशतः उस ईश्वर की ओर ले गया जो वास्तविक और सच्चा मालिक है अथवा जो मालिक-ए-कुल है।

इस संसार में यदि मुझसे पूछा जाय तो मैं निर्भय होकर कहना चाहता हूं कि इस त्रुटिपूर्ण ईश्वर भक्ति ने मानव जाति को विभाजित कर दिया है और हम विभिन्न प्रकार के मत-मतांत्र और सम्प्रदायों में विभाजित हो गए हैं। इसलिए मैंने इस जीवन के श्रेष्ठतर प्रसन्नमय और सुखदायी बनाने के लिये पुकार की कि 'मनुष्य बनो'। जियो और जीने दो। भेदभाव, द्वेष-ईर्ष्या, घृणा त्यागो। संसार का काम करो। कमाओ, खाओ, प्रसन्न रहो।

जीवन के माने काम और काम के माने जीवन है। जीवन प्रेम है और प्रेम ही जीवन है। जीवन समझ और समझ ही जीवन है। अथवा कर्म, भक्ति और ज्ञान ही जीवन है। जोइस से ऊँचा जाना चाहते हैं और सच्चे ईश्वर से मिलकर आवागमन से बचना चाहते हैं उनके लिये सत्त कबीर का शब्द है।

बाबा अगम अगोचर कैसा। ताते कह समझाऊँ ऐसा ॥
जो दीसे सो तो वो है नाहीं, है सो कहा न जाई।

सैना बैना कह समझाऊँ, गूंगे का गुड़ खाई ।।

जो कुछ दृष्टिगोचर होता है क्या बाहर क्या भीतर यह सब प्रतिबिम्ब है। कैसे ? अन्तर में जो कुछ देखते हो यह संस्कारों का ही चित्रण है जो तुम्हारे मन पर जन्म जन्मांतरों अथवा इस जन्म के वाह्य प्रभावों का परिणाम है। बाहर में जो कुछ देखते हो यह इस सूर्य मण्डल के खेल का परिणाम है।

वास्तविक ईश्वर कहाँ है ? समझने का प्रयत्न करो और फिर उसमें अपने आपको लय कर दो।

दृष्टि न सूझे मुष्टि न आवे, बिनसे नहीं न्यारा।
ऐसा ज्ञान कथा गुरु मेरे, पण्डित करो विचारा ।।

चकित हूं कि महात्मा जन किसका दर्शन कराते हैं। यह समझ करके कि:—

भोली-भाली दुनियाँ, लुट-लुट के लुट गई सारी।
जो भी उठा उसने स्वाँग बनाया, दौलत से झोली भरली सारी।।
अज्ञानी जीव काल करम के मारे, दर दर भटका खावें।
भेद मिले नहीं किसी को साँचा, खोजत-खोजत उमर गवावें ।।
सन्त प्रगटे जग के अन्दर, सांची बात बतावें।
साँचे का कोई गाहक नाहीं, झूठे जग पतियावें ।।
सन्त दयाल जग में प्रगटे, अभय डंक बजाया।
जो शरण मैं उनकी आया, भूल भ्रम से हटाया ।।

इसलिए चूँकि विज्ञापन में जो शब्द लिखे हुए थे वो जन साधारण को त्रुटिपूर्ण रूप से आकर्षित करते हैं। मैंने निवल, अबल और अज्ञानी जीवों के लिये लेखनी उठाई है कि ऐसे धर्म व पन्थों के चक्कर में मत आओ जो ये कहते हैं कि वो तुमको ईश्वर आदि का दर्शन करा देंगे। इसलिए ईश्वर के दर्शन क्या हैं ? जहाँ मानव अपने अस्तित्व को खो कर सर्वव्यापी हो जाता है। और अपने व्यक्तित्व को खो जाता है फिर वो क्या कहे कि वो क्या है। जैसे कि सन्त कबीर आदि धाम

के शब्द में कहा गया है:—

जहाँ पुरुष तहाँ कछु नाहीं, कहें कबीर हम चीन्हा।
जो कोई हमरी सैना बूझे, पावै पद निर्वाना ॥

यह है गुरु ज्ञान:—दृष्टि न सूझे मुष्टि न आवे, विनसे नहीं न्यारा।
ऐसा ज्ञान कथा गुरु, मेरे पण्डित करो विचारा ॥

मैं उस विज्ञापन से बहुत प्रभावित हुआ था किन्तु उसके इन शब्दों से कि वो ईश्वर के दर्शन कराते हैं, मन उनके दर्शन करने के लिये तैयार न हुआ। किन्तु जैसा कि पहले कहा है केवल इस बात को बुद्धि से समझ जाने पर शान्ति न मिलेगी। सन्त कबीर वर्णन करते हैं :—

बिन देखे प्रतीत न आवे, कहे न कोऊ पतियाना।
समझा होय सो शब्दे चीन्हे, अचरज होय अयाना ॥

इसके लिये आन्तरिक अनहद शब्द को पकड़ो। उसमें लय हो जाओ। फिर अज्ञानी जीव को पूर्ण विश्वास होता है। जैसा कि मुझ मूरख को हुआ। जिसने जीवन उस ईश्वर के प्रेम और दर्शन की अभिलाषा में व्यतीत किया उसका न तो कोई आकार है। नहीं वह निराकार है।

कोई ध्यावे निराकार को, कोई ध्यावे आकारा।
वो तो इन दोनों से न्यारा, जानै जानन हारा ॥

अनेक धर्म सम्प्रदाय और मत-मतांत्र वाले अपनी-अपनी बोलियाँ बोलते हैं। मैंने सब की बोलियाँ सुनीं। साधन किये। अनुभव विवश करके सन्त कबीर की वाणी के साथ सहमत होने को कहता है।

क़ाज़ी कथे कतेव कुराना, पण्डित वेद पुराना।
वो अक्षर तो लखा न जाय, मात्रा लगे न काना ॥
नादी वादी पढ़ना गुनना, बहु चतुराई भीना।
कहें कबीर सो पड़े न प्रलय, नाम भक्त जिन चीन्हा ॥

वो नाम क्या है ? अपने अन्तर अनहद वाणी का सुनना।

और किसी रहस्य ज्ञाता का सतसंग। बस! जब साक्षात्कार हो जाता है फिर। माला फेरूँ न हरि भजूँ, मुख से कहूं न राम।
मेरा राम मुझे जपै, तब पाऊँ विश्राम।।

फिर जीवन विदेह गत् अथवा जीवन मुक्त हो जाता है सत कबीर कहते हैं :—

सन्तो सहज समाध भली ।।टेक।।
गुरु प्रताप भयो जा दिन से, सुरत न अन्त चली ।।
आँख न मूँदू कान न रूँधू, काया कष्ट न धारूँ ।
खुले नैन मैं हँस-हँस देखूँ, सुन्दर रूप निहारूँ ।।१।।
कहूँ सो नाम सुनूँ सोई सुमिरन, खाऊँ पीऊँ सो पूजा।
गृह उद्यान एक सम लेखूं, भाव मिटाऊँ दूजा ।।२।।
जहाँ जहाँ जाऊँ सोई परिकरमा, जो कुछ करूँ सो सेवा।
जब सोऊँ तब करूँ दंडवत, पूजुँ और न देवा ।।३।।
शब्द निरन्तर मनुआ राता, मलिन वासना त्यागी।
उठुत बैठत कबहु न बिसरे, ऐसी ताड़ी लागी ।।४।।
कहें कवीर यह उन्मुनि रहनी, सो परगट कर गाई।
दुख सुख के यक परे परम सुख, तेहि सुख रहा समाई ।।५।।

फिर संसार का सब कर्म करता हुआ प्राणी अकर्मक हो जाता। शरीर छूटा। कहा जायगा? जाना कहाँ है? आना कहाँ से हुआ था "लब खुले और बंद हुए यह राज़े ज़िन्दगानी निकला"। अपना कर्मभोग था अथवा मौज थी। इच्छा थी अपना अनुभव बता जायँगे। इसलिए बताते रहते हैं। इस माया देश में जीवों की दुर्दशा देख कर कार्य करता हूँ।

नोटः—मैं समझता हूं कि जन साधारण मेरे इस लेख को पूर्ण रूप से समझ न सकेंगे। किन्तु अब इस शिक्षा की आवश्यकता है। बिना इसके भारतवर्ष का कल्याण न होगा। अधिक सोच विचार के पश्चात् दाता दयाल, परम तत्त्व, ज्ञान स्वरूपी अवतार के

आदेशानुसार और हुज़ूर साँवले शाह परमसन्त की आज्ञानुसार मैंने निर्भय होकर अपने कर्तव्य का पालन किया है। जिससे कि जगत का कल्याण हो सके। अब नहीं तो भावी सन्तान इस सत्यता को अपनायेगी।

वैशाखी दिवस (परम दयाल जी महाराज़)

नया साल है, नया ख़्याल है, नया क़ाल है अपना।
नया देश है, नया भेष है, नया सन्देश है अपना॥

आज समस्त रात्रि एक ऐसी दशा में रहा जिसका वर्णन करना कठिन है।

ज़िन्दगी के तबक़े को छोड़ा, हस्ती के तबक़े में था।
हस्ती क्या है दोस्तो, मस्ती के तबक़े में था॥
हस्ती से बेहस्ती में, जाने की कोशिश में था।
पर न जा सका भाइयो, उठा तो इस बस्ती में था॥

सोचता हूं, क्यों मैं वापस आता हूँ? कुछ समझ नहीं आती। इतनी आती है कि :—

हर वजूद को किसी काम के लिये, मौज़ ने बनाया है।
जब तक न होगा काम पूरा, कौन निज घर सिधाया है॥

इस अनुभव के आधार पर यदि आज मैं नवीन वर्ष को अपना विचार दूँ तो त्रुटि नहीं होगी। वह नवीन विचार क्या है?

जब तक जियो काम करो, खुश रहो बेफ़िक्री रहे।
मौज का ले आसरा जियो, रूह से बस उसकी याद रहे॥
क्यों माला फेरो, साधन करो, क्यों खपो दिन रात तुम।
उसकी मरज़ी पर रहो, और शाद रहो सुखी रहो॥
आरज़ू थी मेरे अन्दर, मैं मिलूं उस को जाकर दोस्तो।
वह है निकला अनाम पद, हस्ती से है आगे दोस्तो॥
जाता हूँ वाँ पर फिर आता हूं, नीचे को क्यों न समझ सका।
इतनी समझ आई कि, मौज उसकी ही है दोस्तो॥

अपने बसकी बात नहीं है, क्यों लें सरदर्दी यहाँ।
राज़ी बरज़ा रहना ही है, असली मज़हब ऐ दोस्तो ॥
काम करो और खुश रहो, जीओ और जीने दो।
यह मज़हब है असली सच्चा, उम्र खोकर समझा है दोस्तो ॥

इस लिये इस नवीन वर्ष में नवीन विचार, जीवों को अनुभव के पश्चात कर्मभोग वश दिये जारहा हूँ। जिन्हें विश्वास न हो वह मेरी भाँति स्वयं करके देखलें:-भ्रम था अज्ञान था, वहम था दिल में भरा।
जिसने यह सब काम कराया मुझसे दोस्तो॥

दौड़ दौड़कर देख लिया। उसकी इच्छा पूर्ण हो। उसकी मौज मुख्य है। तुम भी यदि किसी के अनुभव से लाभ उठाना चाहते हो तो उठालो। और जीवन को प्रसन्नता पूर्वक अचिन्त्यपने और परस्पर प्रेम में व्यतीत करदो और अपने आपको उतके अर्पण कर रक्खो। जीवन की यात्रा को प्रसन्नता पूर्वक समाप्त करो। यदि नहीं विश्वास होता तो करके देखलो।

चूँकि भ्रम है इसलिये सतसंग किसी पहुँचे हुये पुरुष का करो। अन्तिम सोपान [लक्ष्य-पद] जीवनमुक्त अथवा विदेह गति है। जीवन क्या है ? "लब खुले और बन्द हुये।" इसलिये जब तक जीवन है। प्रसन्नता पूर्वक व्यतीत करो। मौज के आधीन जीवन रहे।

करे करावे आप ही आप। मानुष के नाहिं कुछ भी हाथ ॥

प्राणी के हाथ में कर्म है। इसलिये कर्म करो। कर्म करो। तुम्हारे पास मन है। उसको उसकी मौज पर छोड़ो। तुम्हारे पास आत्मा है। प्रसन्न चित्त रहो। प्राणीमात्र को सर्व आनन्द और शान्ति।

दयाल नन्दूभाई जी महाराज का अमूल्य उपदेश

अब नहीं चिन्ता किसी की, बेफिक्री में दिन व्यतीत।
दिन को करता काम हूँ, और रात को हूँ इन्द्रीजीत ॥
मन हुआ बे परवाह, लापरवाही में रहता सदा।
न किसी से वास्ता है, न किसी से बात चीत ॥

साधन और अभ्यास का, मुझको नहीं मुतलक़ ख़याल ।
मस्त रहता मस्ती में, गाता सदा मस्ती के गीत ।
कैसी हालत है मुयस्सर, कुछ कहा जाता नहीं ।।
रंजो ग़म दर्दो फ़िक्र, नहीं पास फटके मेरे मीत ।।
नहीं जाप है सुमिरन भजन, और ध्यान करता मन नहीं ।
क्या कहूं क्योंकर कहूँ किससे कहूँ, क्यों गाऊं गीत ।।
अब ज़ुबाँ होती है चुप, कहने में कुछ आता नहीं ।
मुन्शी मेरा भाई सच्चा, तुझ से मेरी सच्ची प्रीत ।।
राधास्वामी रम रहे हैं, एड़ी से चोटी तलक ।
अब न दुबिधा और न दुचिताई, न एक दो की गिनती गीत ।।

रूबाइयाँ जो श्री जौहरी "श्याम" अलीगढ़ ने परम दयाल जी को शिवरात्रि १९६१ पर सुनाईं ।

लोग करते हैं शिकायत वह ख़ुदा मिलता नहीं ।
दैर देखा क़ाबा देखा कुछ पता मिलता नहीं ।।
औलिया से मैंने पूछा आप को है कुछ पता ।
खानये दिल के सिवा वह और जा रहता नहीं ।।
खानये दिल को टटोला ज़ंग आलूदा मिला ।
संग शीशा हो गया सारा पानी ढल गया ।।
बेबसी से तंग पा कर औलिया ने फिर कहा ।
सैक़ले सतसंग लेकर कीजिये इस को सफ़ा ।।
हमनशीनी औलिया से मैल दिल होता है दूर ।
बन न पाई यह भी मुझसे क्या करूँ अपना क़सूर ।।
ज़िक्र कर घर बैठ भाई जैसा तैसा बन सके ।
रफ़्ता रफ़्ता करते करते आयेगा तुझको शऊर ।
ज़ंगे दिल छुटने न पाई दिन बदिन दूनी बढ़ी ।
मर्ज़ें दिल बढ़ता रहा ज्यों ज्यों दवा की की सई ।।
पहले थी दुनियाँ अकेली दीन का भी ग़म बना ।
सतगुरु तुम ही बतादो मर्ज़ की मेरी जड़ी ।।

छोड़ कर दुनियां के धन्धे तू शरण सत गुरु में आ।
यह अमल अपना बना कर पायेगा रब का पता ॥
साफ़ कह देता हूं तुझको वह ही रब के रूप हैं।
दूर कर दुनियाँ की कसरत वह नहीं तुमसे जुदा ॥

—❀—

कर्मभोग अथवा मौज (परम दयाल जी महाराज)

दाता दयाल महर्षि जी महाराज की स्टेचू (संगमरमर कीमूर्ति) के सम्मुख बैठ कर लिख रहा हूँ। क्या लिख रहा हूँ ?

ऐ परम तत्व पूर्ण ज्ञान के अवतार। यह जीवन मुझे आपके पवित्र चरण कमलों में लेगया। मौज ऐसी ही थी, अथवा मेरे कर्म ही ऐसे थे। जीवन में भ्रम, अज्ञान, शंका और संदेह से घिरा हुआ था। और इन्हीं के कारण मैंने आपको अत्यंत कष्ट दिया। आपने मेरे अज्ञान को संभालते हुये मुझे सत्यता, वास्तविकता और शान्ती का पथ प्रदान किया। आपकी आज्ञा के पालन करने में मैंने जगत कल्याण के क्रम में अपनी स्थिति परस्थिति और योग्यता के अनुसार जो कुछ मैं कर सका, मैंने किया।

मानव जाति विशेषतः भारतवासी इस भ्रम और अज्ञान के कारण दुखी हैं। कोई उपाय और विधि समझ में नहीं आती जिससे कि इनका भ्रम और अज्ञान तुरंत ही दूर किया जा सके:—

कोई साथी नहीं कोई सहाई नहीं। कोई सगा नहीं कोई भाई नहीं ॥

हाँ ! यदि बात को परदे में रखता, झूठ बोलता, छल-कपट, हेरा फेरी से कार्य लेता। तो संभव था कि मैं अपनी कोई टोली बना लेता। मेरे स्पष्ट वर्णन, सत्यता और निष्कपटता के कारण इस सत मत तथा राधास्वामी दयाल, सत्त कबीर आदि पंथ के अनुयाई भी मेरी ओर आकर्षित नहीं होते। कुछ थोड़े से साथी हैं। किन्तु उनमें भी अधिक संख्या स्वार्थियों की है। मुझे समझ नहीं आती कि आपकी आज्ञा का पालन किस प्रकार करूँ ? क्या अभी मेरे कर्म

शेष हैं ? अथवा तेरी मौज मुझ से अभी और कुछ कार्य लेना चाहती है। कुछ समझ नहीं आती है, इसलिये :—ऐ संसार वालो ! जीवन में कर्म को काटने अथवा मौज आधीन कुछ कहता रहता हूं। आज क्या कहना चाहता हूँ ? सुनो :—

मैं जो कुछ भी कहता रहता हूं, वह मेरा निज अनुभव, वाह्य प्रभावों पर आधारित होता है।

(१) एक स्त्री का आज ही पत्र मिला है। अपनी दुख भरी कहानी लिखी है।

(२) एक वृद्ध रिटायर्ड पुलिस आफ़ीसर आया और रोने लगा, क्या बात हे ? कहने लगा। ६ वर्ष से मेरी पत्नी मुझ कष्ट दे रही है। मेरी सहायता कीजिये।

(३) आज एक और इसी प्रकार का पत्र मिला। एक फ़ौजी अफ़सर लिखता है कि उसका पिता एकबार मुझ देहली में दशहरे पर सतसंग में मिला था, वह अपने सुपुत्र इसी फ़ौजी अफ़सर को लिखता है कि उसे प्रातः साधन में मेरे प्रकाश रूप में दर्शन हुये और मैंने बहुत कुछ उससे कहा। जिससे वह (उसका पिता) अति प्रसन्न है। उसका पुत्र यह फ़ौजी अफ़सर भी मुझसे ऐसी ही दया चाहता है।

ऐ संसार वालो सुनो :—उस स्त्री और वृद्ध पुरुष के दुखी होने में और उस फ़ौजी अफ़सर के पिता के सुखी होने में क्या रहस्य है ?

काश अगर यह ज्ञान मिल जाये, तो इन्सान का दुख सुख जाये।
शान्ति फिर इन्सान को आये, जीवन अपना सफल कर जाये॥

मेरे पास आज गोपालदास आया था। मैंने कहा गोपाल ! तू ही कोई सम्मति दे, जिससे मैं अपना कर्त्तव्य पूर्ण कर जाऊँ। कर्म समाप्त हो। वह हँसा, कहने लगा। महाराज जी। जब तक झूँठ, छल, कपट से काम न लेंगे आपका क्षेत्र नहीं बनेगा। क्षेत्र के बिना किसी कार्य नहीं किया और न कोई कर सकता है। मैंने कहा:—क्या मैं

जीवों से कहूं कि मैं उनके अन्तर जाकर दर्शन देता हूं ? क्या मैं जादूगर हूं ? फूँक मार सकता हूँ। बताओ गोपालदासः— यदि ऐसा नहीं करोगे तो क्षेत्र नहीं बनेगा और न आपकी विचारधारा ही फैल सकती है। क्षेत्र बनाने के लिये प्रोपेगेन्डा, झूँठ, सच, छल-कपट से काम लेना पड़ता है। आप भूले हैं। आपका साथ कौन देगा ? अपनी बात को सुनाने से पूर्व क्षेत्र बनायें। मैंने अनेक बार प्रार्थना की किन्तु आप सुनते ही नहीं हैं।

फ़क़ीरः— तुम क्यों साथ देते हो ? कितनी सेवा करते हो ?

गोपालदास—मैं अब अज्ञानी नहीं हू। अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। इससे पूर्व मैं अज्ञानी मूर्ख था। अधिक आयु इस पंथ की उलझनों में खोदी। दौड़ा, भागा रोया। आपकी संगत में आया। यहां आकर मुझे सुख चैन और शान्ति मिली। यह कृतज्ञता है। इसलिये अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। किन्तु चूँकि आपने पूछा है इसलिये कहा है कि बिना हेरा-फेरी के आपको सफलता न मिलेगी।

फ़क़ीरः—अधिक समय तक मौन रहने के प्रश्चात लिख रहा हूँ। मुझे तो असत्य अप्रिय है। अपना जन्म नहीं गवाना चाहता हूं। "नर शरीर सुर को भी दुर्लभ"। किन्तु कर्म भोग वश कहता हूँ।

सुनो सुनो ऐ मज़हब मिल्लत पन्थ के वालियो।
सुनो सुनो ऐ सोशल, पोलिटीकल लाइन के मालिको॥
तुम सुनो सुनो या न सुनो, हमने कहने का ठेका लियो।
कर्म अपने ऐसे ही थे, या गुरु की आज्ञा समझ लो॥

क्या सुनाना चाहता हूं ? हे मानव ! तेरे दुःख सुख का मूल कारण तेरा अपना ही मन है। जब तक यह तेरा मन तेरे नियंत्रण में नहीं है तू इस संसार में दुख सुख से नहीं बच सकता है। इसलिए अच्छा हो यदि तू इस मन पर नियंत्रण रखने का प्रयत्न

करे। मन के रूप को समझ और अपने निज स्वरूप (ज़ात) अथवा मालिक जो तुझसे प्रथक नहीं है उसके आश्रित होता रह।

आप आप को आप पिछानो। कहा और का नेक न मानो। स्वामी जी किन्तु अनुभव मेरा बताता है कि यह भी अपने बस की बात नहीं है। फिर भी प्रयत्न करते रहना अनिवार्य है। सत्त पुरुषों का जिनका मन नियंत्रण में है उनका सतसंग करते रहो।

मैं समझता हूँ कि यह मन का चक्र (काल चक्र) मानव को अपनी ओर खींचता रहता है। वृद्ध हो गया, अब भी इसकी तरंगें नहीं छोड़ती हैं। किन्तु दया है दाता की मैं फंसता नहीं हूं। कल की मौज जाने। किस बात का अहंकार करूँ।

इसलिये अपने कर्म भोग वश अथवा कर्तव्य जो दाता मुझे ने सोंपा क्यों सोंपा ? पता नहीं। मैं सच्चे हृदय से चाहता हूं। प्राणी मात्र को शान्ती।

आहा ! हे दाता दयाल सतगुरु ! संसार की दृष्टि में मैं दीवाना कहलाता हुआ कहता हूँ कि आपकी आज्ञा के पालन करने में कि जगत कल्याण आदि के विचार से शिक्षा में परिवर्तन कर जाना। मैंने निज अनुभव के आधार पर "मनुष्य बनो" की पुकार कर दी है। क्योंकि शेष बातें जो सुनता था सब में हेरा फेरी दृष्टि गोचर हुई।

अपनी शरण में ले ले, ऐ परम तत्व दाता।
ज़िन्दगी में तुमको ढूँढ़ा ढूँढ़ कर क्या पाया॥
ऐसी दशा है आती, जहां अपना आप मिटाया।
तू अलख अगम अनामी, तेरी ज़ात है दवामी॥
इससे परे ऐ मालिक, तेरा भेद नहीं है पाया।
कहने को लाख कह दूँ, सुनने को लाख सुन लूँ॥
बात सच्ची यह है कि, तू है अगम अमाया।
सुरत शब्द में रख कर, कर कर चुका मैं साधन॥

इस साधन से मस्ती आई, और अनुभव को बढ़ाया ।
आखिर को जहाँ पहुँचा, भूलता हूं सब कुछ ।।
इस भूल जाने में ही, है परम सुख पाया ।।
तेरी मौज से बना था, तेरी मौज ने ही बनाया ।
बन कर फ़क़ीर जो कुछ, अनुभव हुआ बताया ।।

ग़ज़ल (पीरेमुगां साहब)

इल्म परदा बन गया, वह है हक़ीक़त का हिजाब ।
जहल तारीकी में है, तारीकी है बेहद्दो हिसाब ।।
आलिमों को ज़ौम है, है बाम पर यह इल्मे हक़ ।
एक करता है सवाल, और एक देता है जवाब ।।
यह सवाली और जवाबी, भूले क़ीलो क़ाल में ।
जाहिलों से बढ़ के यह जाहिल, हैं जाहिल लाजवाब ।।
चश्म बीना होती है, दीदार हक़ से बेगुमां ।
हक़ नहीं अहमक़ का साथी, समझें इसको शेखोशाब ।।
कोई अटका दीन में, दींदारी में मगरूर है ।
हक़ से दों को क्या है निसबत, यह नहीं राहे सवाब ।।
फिलसफ़ी को यह है ग़ुर्रा, फ़िलसफ़ा है राहे हक़ ।
बन गया यह फ़िलसफ़ा, जहले मुरक्कब बेहिसाब ।।
शाज़ मिलता है परिन्दों में, कभी ताइर हुमां ।
इस तरह तालिब हक़ीक़त का, कोई होगा जनाब ।।
राधास्वामी ने कहा, हक़ की शकल तू आप हो ।
आप आपको जानले, हट जाये परदा बेहिजाब ।।

कर्म भोग अथवा मौज (परमदयाल जी परम हितैषी, परमसनेही)

आज सुबह उठा, रात को कहां था, सुनो भाई ।
शहर ख़ामोशी में था, ख़ामोशी में चेतन्ता की हस्ती छाई ।।

अजब था खेल वह इक, नहीं कहने में वह आई ।
ज़ुबानो ख्याल सब भूला, न अनहद शब्द था कोई ।।
नहीं प्रकाश का था निशाँ, अजब लीला थी छाई ।
नाम और नामी नहीं थे हरगिज़, मगर हस्ती थी इक वहां भाई ।।

प्रातः हुई फिर वही निवास स्थान नं० १८ और मेरी शैया। आप ही आप चेतन्यता में आते हुये ध्वनि हुई :—

मुड़ मुड़ क्यों आऊँ, नहीं भेद मैं यह पासका।
मौज का खेल है उसका, इतना ही मैं समझ सका ।।

ऐ संसार वालो ! इस संसार में मौज ने बनाया। संसार को देखा। उसके बनाने वाले का विचार हुआ। खोज की। आयु बीत गई। इच्छा की थी कि अपना अनुभव वर्णन कर जाऊँगा। जो जो जिस जिस प्रकार के अनुभव इस खोज के क्रम में प्राप्त हुये, विवशतः कर्म भोग वश अथवा दाता दयाल की आज्ञानुसार कहता हुआ चला आरहा हूँ। अब वृद्धावस्था है, मूत्र रोग के कारण रात्रि को ४-५ बार लघुशंका के लिये जाता रहता हूँ। सौभाविक विचार आता रहता है कि अब चलने का समय निकट है, इसलिये खोज और भी बढ़ती जा रही है। रात दिवस प्रातः संध्या मेरी सुरत उस आधार मालिक की ओर खिचती रहती है। इस समय तक जहाँ मेरी खोज लिये जारही है उसका वर्णन कर दिया है। इच्छा है कि उस अवस्था से लौट कर न आऊँ परन्तु आ जाता हूं। मेरे वश में नहीं है :—

मुड़ मुड़ कर क्यों होश में आता हूं, यह भेद नहीं मैं पाता हूँ।
आखिर मजबूर होकर चुप हो जाता हूं, वह है वह है उसको सीस नवाता हूँ

इतना ऊँचा क्यों गया ? मेरे बस की बात नहीं है। जीवन के अनुभव ने सिद्ध किया। मानसिक विचारों और दृष्यों से तो आप सतसंगी जनों ने मुझे धक्के मारमार कर ऊपर को धकेला ! आपका धन्यवाद ! चूँकि मैं किसी के अंतर नहीं जाता हूँ। इसलिये

रहस्य समझ गया कि जितने भी आन्तरिक दृष्य हैं प्रत्येक व्यक्ति के उसके अपने ही वाह्य प्रभावों और विचारों का परिणाम हैं। अब यह माया का मंडल मुझे आकर्षित नहीं कर सकता है। रहा प्रकाश और शब्द। चूँकि जैसा चाहूँ वैसा प्रकाश प्रकट कर लेता हूँ और जैसा शब्द चाहूं सुन सकता हूं। इससे सिद्ध हो गया कि प्रकाश और शब्द भी मेरे आश्रित हैं। मैं उनके आश्रित नहीं हूं। इसलिये विवशतः अब मैं उस मालिक की खोज में रहता हूँ जो मेरा आधार है। इसलिये यह अवस्था मेरे अंतर उत्पन्न होती रहती है जिसका उल्लेख मैंने किया है।

संभव है मैं अपने को पथ भ्रष्ट अथवा अपने मस्तिष्क संतुलन की त्रुटि समझ लेता किन्तु सत पुरुषों की वाणी मुझे निश्चय कराती है कि मैं त्रुटि पर नहीं हूँ। सुनो कबीर साहब के आदि धाम शब्द की अंतिम कड़ीः—

जहाँ पुरुष तहाँ कछु नाहिं, कहें कबीर हम चीन्हा।
जो कोई हमरी सेना समझे, पावे पद निरवाना॥

नहीं खालिक़ मखलूक़ न खिलक़त॥ कारन कारज नहीं वहाँ दिक़्क़त॥
जो कुछ था सो अब कह भाखूं। उनमुनि दशा बिसमाधि राखूँ॥
[स्वामी जी]

जाप मरे अजपा मरे, अनहद भी मर जाय।
सुरत समानी शब्द में, ताहि काल नहीं खाय॥ [कबीर साहब]
मैना तन पिंजरे में रहकर, बोली बोले रे मैना॥ [दाता दयाल]
कहाँ किस में मैं, है कहाँ किस में तू है।
यह सब कहने सुनने की गुफ़्तगू है॥

इस निज अनुभव के आधार पर अपने कर्मभोग वश अथवा मौज आधीन कहता हूँ :—

भारत वासियो तुम बट गये, उस मालिक के ग़लत ख्याल से।
बन गये लाखों फ़िरक़े, दुख सुख पाओ तुम अपने ख्याल से॥

वह ज़ात मालिक क्या है, जो अनुभव में आया कह चला।
कह चला भारत के कल्यान को, मुतास्सर होके उसके बुरे हाल से।।

इसलिये पुकार कर चला हू ! मनुष्य बनो। हम सब एक महान परम तत्त्व के अंश हैं। किसी विशेष लक्ष्य की पूर्ति के लिये प्रकृति माता ने रचना की और हम इसमें आगये। लक्ष्य अथवा ध्येय क्या है ? प्रसन्ता ! अचिंतपन ! जीओ और जीने दो। खाओ और खिलाओ, कमाओ और कमाने दो, हँसो, खेलो-कूदो और प्रसन्न रहो। एक दूसरे के काम आओ। भाई चारा बरतो। हम सब एक हैं। केवल यह स्मरण रहे कि हम सब उस घर से आये हैं जिसका उल्लेख मैंने किया है। यदि नहीं विश्वास होता तो कर देखो। अधिक क्या कहूं।

जीवन के खेलों का दृष्य और उसका नियम जितना समझ में आया, बता चला। यदि कुछ और समझ में आया वह भी बता जाऊँगा।

हृदय की संकीर्णता, द्वेष, ईर्ष्या, पक्षपात, घृणा, मत्तसर, अज्ञान भ्रम और संशय त्यागो और बस निर्भय होकर जीओ।

नोटः—मित्रो ! मैं बहुत ऊँचा चला गया हूं। जन साधारण के लिये कुछ कहता हूँ कि इस अवस्था को प्राप्त करने के लिये किसी निर्बन्ध पूर्ण पुरुष का ध्यान, प्रेम और सतसंग करो। मेरी इस समय की वाणी अधिकतर महात्माओं, गुरुओं और बुद्धिमान वर्ग के लिये है।

रेडियेशन का नियम कार्य करता है। यह संस्कार और विचार तुमको समय पर इस अवस्था में ले जायगा। जैसा कि दाता दयाल का प्रेम, ध्यान और संस्कार मुझे यहाँ ले आया।

कलाम (दाता दयाल)

आब से तू आबरू, अपनी बढ़ाले ऐ बशर।
तुझ में आबो ताब आये, हो यह पानी का असर।।

आब की सूरत, मुहीते कुल समझ ले आपको ।
इस समझ का, खुद बखुद आ जायेगा तुझमें असर ।।
तू जुदा पानी से कब है, पानी तेरी ज़ात है ।
हो जहाँ सैराब तुझसे, आदमी है तू अगर ।।
फ़ैज़ से शादाब करदे, अपने आलम को अभी ।
असलियत की दे रहा हूँ, आज मैं तुझको खबर ।।
ऐब को औरों के धो, और ऐबबीनी तर्क कर ।

ले हुनरबीं अब बना, फ़िलफ़ूर तू अपनी नज़र ।।
आबोदाना लेगया था, मुझ को फ़ैज़ाबाद में ।
महव कुछ ऐसा हुआ था, मैं किसी की याद में ।।
दोस्ती होती है कैसी, और क्या होता है फ़ैज़ ।
हाशिमी से पूछ लो जा कर, अमीनाबाद में ।।

कर्मभोग अथवा मौज (परम दयाल जी महाराज)

ऐ प्यारे वीर मेरे बीर दाता अम्मा के बच्चे ।
हम दोनों दूध पिया जब हम थे बच्चे ।।
रहा प्रेम हम में भाई भाई का ऐ मेरे नन्दू ।
इस प्रेम की खातिर हम रहे मिलते जुलते ।।
कर्म भोग वश या मौज के आधीन भाई ।
या गुरु आज्ञा के वश कहूँ कुछ नई बात समझाई ।।
क्या !
हिन्दू धर्म के संस्कार थे, पर सन्तन की सुन वाणी ।
समझ सका नहीं था उसको इसलिये थी हैरानी ।।
प्रण किया था कह जाऊँगा जो होगा अनुभव अपना ।
इसकी खातिर कर्म भोग वश लिया यह सिर खपना ।।

सच्ची बात कहता हूँ, यद्यपि जानता हूँ समझने वाले कहाँ हैं ? किन्तु कर्म भोग है। स्वामी जी की वाणी है। "भक्त, उपासक, योगी, ज्ञानी, इन सब चक्कर खाया।"

यद्यपि धर्म और पंथ में भक्तों, उपासकों, योगियों व ज्ञानियों का आदर मान रहा है और यहाँ यह लिखा हुआ है कि इन सबने चक्कर खाया। सोचो, यदि मैंने इस रहस्य को समझने में आयु व्यतीत की है, तो मैं सत्यप्रिय था अथवा नहीं। मेरे जीवन के अनुभव ने विवशतः मुझको स्वामी जी की उपरोक्त वाणी को मानने को विवश किया और इस विवशता का कारण मेरा निज अनुभव है।

चूँकि मेरे निज अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया है कि आवागमन सत्य है जैसा कि मैंने अपनी माता, पुत्र और पुत्री के आवागमन का उल्लेख किया हुआ है। और उनका यह आवागमन "अन्त मता सो गता" के सिद्धान्त पर सत्य सिद्ध हुआ, इसलिये यह निश्चय होगया कि जो व्यक्ति किसी भी सांसारिक अथवा विचाराधीन वस्तु से सम्बन्ध रखता हुआ इस शरीर का त्याग करेगा तो उसको उसी विचार के आधीन दूसरा जन्म प्राप्त करना पड़ेगा।

साथ ही यह निश्चय हो गया कि जो रूप हम साधक और अभ्यासी अपने अन्दर बनाते हैं वह वास्तव में हमारी अपनी ही कल्पना से होता है। वह बाहर से कोई नहीं आता है जैसा कि मैंने अपने अनुभव के आधार पर सिद्ध किया है कि मैं कहीं नहीं जाता। व्यक्तियों के अन्तर सहायता करने वाला उनका अपना ही विचार, भाव, श्रद्धा और विश्वास होता है। और यह समस्त मानसिक खेल, ऋद्धि, सिद्धि, नौनिधि आदि संकल्प शक्ति का खेल है जो कि वास्तव में माया देश में होता रहता है। इसलिये अब इस अनुभव के आधार पर विवशतः मैं शब्द और प्रकाश के मण्डल में ठहरने को विवश हूं।

यह विवशता किसने दिलाई, इस समझ, ज्ञान और अनुभव ने और यह अनुभव, ज्ञान दाता दयाल जी की कृपा से प्राप्त हुआ। इसलिये चूँकि शरीर के रहते हुये मानसिक अवस्था अनिवार्य है, मैं मानसिक अवस्था में दाता दयाल का कृतज्ञ हूं और साधारणतः मानसिक अवस्था में रहता हुआ कृतज्ञता के अन्तर्गत दाता दयाल का स्वरूप सम्मुख आता रहता है और मेरा सिर उनके चरणों में झुकता रहता है। किन्तु अब मेरा अपना इष्ट वो आन्तरिक प्रकाश और शब्द है।

यह शब्द, प्रकाश अथवा मानसिक व शारीरिक बोधभान प्राणी के अस्तित्व में सब के सब वाह्य रचना से आकर हमारे अन्तर में विद्यमान रहते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की शारीरिक प्रकृति वाह्य प्रकृति से बनती है और प्रत्येक व्यक्ति में जो विचार उत्पन्न होते हैं यह सबके सब वाह्य प्रभावों, जन्म जन्मांतरों और इस जन्म के संस्कारों का परिणाम होते हैं। इसी प्रकार हमारे अन्तर जो प्रकाश और शब्द है वास्तव में वह भी ऊपर के लोकों के प्रकाश और शब्द से आता है। "पिण्डे सो ब्रह्माण्डे" व्यक्ति में एक मिश्रित रचना है, साथ ही जो वस्तु इस शरीर, मन, शब्द व प्रकाश की साक्षी है अथवा इसमें रह कर स्वयं को भूल कर शरीर, मन, प्रकाश और शब्द को अपना रूप समझे बैठी है, वह सुरत स्वयं भी किसी और भंडार से आई हुई है। वास्तव में हमारा अपना आपा जो सुरत रूप है वह भी किसी और शक्ति का अंश है।

इस अनुभव के आधार पर अब मैं उस मालिक जो सबका आधार है, जिसका प्रथम अस्तित्व शब्द और प्रकाश है, उसकी ओर खिचा रहता हूँ, यह खिचाव ही वास्तव में भक्ति है! मुझे अपने आप को वह कहने अथवा मानने का साहस नहीं होता है। यद्यपि मैं उसका अंश और एक विचार से वही हूँ। यह सब रचना उसी से होती है, इसलिये वह अंश रूप में अपनी ही रचना में खेलता

रहता है। जब दुखी हो जाता है तो वो मालिक गुरु दयाल बन कर किसी को मिल जाता है वह ज्ञान देकर उसको उस मालिके कुल, परम तत्त्व, सर्वाधार की ओर संकेत करके उल्टा देता है।

इस अनुभव से सिद्ध हुआ कि किसी भी सगुण रूप से प्रेम तथा सम्बन्ध रखना अथवा उसके ध्यान में रहते हुए प्राण का त्याग करना प्राणी को इस आवागमन से नहीं बचा सकता है, और नहीं वह व्यक्ति जो ईश्वर अथवा ब्रह्म को अपनी कल्पना से मानकर अपने कल्पित विचार ईश्वर अथवा ब्रह्म में रहते हुए प्राण त्यागते हैं वह भी आवागमन से नहीं बच सकते हैं। यद्यपि उनका जन्म किसी अच्छे अथवा ऊँचे लोकों में होगा। तो जब तक यह ज्ञान जो मैंने वर्णन किया है न होगा और प्राणी अपने मन से ऊँचा न जावेगा और अपने अंतर अपनी सुरत को शब्द और प्रकाश अथवा उससे ऊँचा निज स्वरूप जात का इष्ट न रक्खेगा वह अपने साथ अन्याय अथवा हत्या करेगा, आत्म हत्यारा होगा और आत्म हत्यारा सदैव वहाँ जावेगा जहाँ प्रकाश नहीं है अर्थात महा सुन्न के मण्डल में। आपने 'उपनिशद सार' पुस्तक जो दातादयाल की लिखी हुई है दयाल के क्रम में प्रकाशित कराई है उसका तीसरा मन्त्र स्वयं पढ़ लें और सन्तुष्ट हों।

इसलिये मैंने सहानुभूति वश यह पत्र लिखा है और चाहता हूं कि आप इस पत्र को "मनुष्य बनो" तथा दयाल पत्रिका में किसी समय प्रकाशित करा दें जिससे कि अधिकारी जीव जिन्होंने राधा-स्वामी मत अथवा किसी धर्म या पंथ में अपने आपको सच्चे हृदय से अपने आवागमन की मुक्ति की इच्छा से सम्मिलित किया हुआ है उनका अकाज न हो। बस यही अभिप्राय है।

यही बात स्वामी जी महाराज ने सहानुभूति रखते हुए संसार की लान्छन सहते हुए कही है। "भक्त, उपासक, ज्ञानी, ध्यानी इन सब चक्कर खाया"।

ऐ पूज्य भाई नन्दू लाखों व्यक्ति सन्त मत में आवागमन से मुक्ति पाने के लिये सम्मिलित हुए हैं, इनको वास्तविक शिक्षा न देकर इस समय के महात्मा जन अपने निज स्वार्थ, आदर, मान, प्रतिष्ठा, डेरे धाम के लिये इनके साथ द्रोह कर रहे हैं। मैं जानता हूं कि जीव इस मार्ग के अधिकारी भी नहीं हैं। यह सब संसार की वासनाओं के पीछे लगे हुए हैं।

चूँकि मेरा कर्त्तव्य था, मैंने उसको निभाने का प्रयत्न किया और अब मैं अपने कर्त्तव्य से मुक्त हूँ। कोई माने अथवा न माने, मैंने शिक्षा में परिवर्तन करके उसको स्पष्ट कर दिया है। यही एक कर्तव्य था जो दाता ने दिया था।

इसी प्रकार मानसिक योगी और ज्ञानी भी जो मन से योग करते हैं अथवा मन से विचार करके अपने आपको काल्पनिक रूप से आत्मा अथवा ब्रह्म समझ कर मस्त रहते हैं। वह भी किसी दशा में महा सुन्न से आगे न जावेंगे। और ये उपनिषदों के अनुसार आत्म हत्यारे हैं। सम्भव है मेरे शब्द किसी को बुरे लगें। किन्तु क्या करूँ कर्म भोग तथा मौज विवश कर रही है कि अधिकारियों के लिये स्पष्ट बात कह दूँ।

जीवों को आरम्भ में मानसिक अवस्था को सूक्ष्म बनाने के लिये सगुण रूप का प्रेम और ध्यान, प्रथम सोपानों में अनिवार्य है। मैंने ऐसा किया है। बिना इसके मन सूक्षम नहीं होता। किन्तु समस्त आयु इसी में लगा रहने से उनका आवागमन नहीं समाप्त हो सकता। इसीलिये बार बार प्रार्थना है "गुरु तू पूरा ढूँढ रे, तेरे भले की कहूँ"। इस कमी को देख कर मैंने यह कार्य किया है।

अहङ्कारी कहे कोई, बुरा कहे या कहे भला।
मैं काम करता हूं, डरता नहीं किसी से ज़रा॥
न गरज़ किसीसे न वास्ता किसीसे, मौज आधीन हूँ।
कहता हूँ बात सच्ची, ताकि जीवों का हो भला॥

संसार वाले बुरी प्रकार इस माया के जाल में ग्रस्त हैं। जो नकलना चाहते हैं उनको कह रहा हूँ।

अपने अन्तर शब्द व, प्रकाश को धारण करो।
जब तक नहीं वो प्रगट किया, कामिल का सत्संग करो।
मानुष जन्म नहीं बार बार, दुर्लभ सभी कहें।
अपने जीवन का कल्याण करलो बात सही को सुनो॥
दयाल दाता ने जो समझाया, और जो समझा जीवन खोकर।
इस राज़ सर्बस्ता को, मैंने ज़ाहिर कर दियो॥
बार बार नहीं अवसर मिलेगा, कह रहा हूँ खोल कर।
शब्द और प्रकाश असली शै है, साफ़ कह चलो॥

नोटः—जो इस पद अथवा सोपान तक नहीं पहुँच सकते हैं उनके लिये मेरी सम्मति किसी निर्बन्ध सत्त पुरुष की संगत, उसकी आज्ञा का पालन करो, उसकी रेडिएशन, उसकी रहनी तुम को अन्तिम सोपान तक ले जावेगी। स्मरण रहे! साँसारिक व्यवहार में भूल न हो।

❀ प्रार्थना ❀

संसार के आधार, अगम निगम के स्वामी।
मन, चित्त, बुद्धि, अहङ्कार से पार ज़ात दवामी॥
तुमरी लगन लगी थी बचपन से अन्तर्यामी।
मौज ले आई तेरे चरण में ऐ स्वामी॥
गुरु स्वरूप में निश्चय हुआ किया प्रेम प्रीता।
सुरत शब्द का मार्ग दीना सहत विवेका॥
जो अनुभव हुआ जीवन में खोल खोल बतलाया।
क्यों खोला है तू ही जाने मेरा बस न रहाया॥
अब अन्त समय मेरा नाता छूटन को आया।
कहाँ जाऊँगा तूही जाने अनुभव कहे न गया न आया॥

परम तत्त्व तू ज़ात अनामी, मैं बुलबुला बन आया।
जैसी मौज तेरी थी प्यारे, वैसा ही खेल खिलाया॥
अपनी तरफ़ खींच रख, अब इसी में है भलाई।
दास फ़क़ीर अपनी तरफ़ से तेरा हुआ शरणाई॥

आज वैसाखी का दिवस है। नवीन वर्ष, नवीन विचार, नवीन वृतान्त। ऐ पूज्य नन्दू! नवीन वर्ष को नवीन विचार आपके चर्णों में भेंट कर रहा हूँ। प्रसन्न रहो। जब तक जीवन है। काम करो। मैंने वास्तविकता को केवल इस विचार से प्रकट किया है कि धार्मिक पक्षपात दूर हो। और मानव मनुष्य बन कर अपने रूप को जानता हुआ एक मालिक ज़ात का भरोसा रखते हुए जीवन यात्रा को पूर्ण करे।

मुझे खेद है कि जगत कल्याण के कार्य में सफलता प्राप्त न कर सका। संस्कार छोड़े जा रहा हूँ। यह संस्कार दाता दयाल का है अथवा संतों का है।

हनमकुन्डा सतसंग केन्द्र को पुष्टी देते रहें। धर्मदास, गिरिधर सिंह, शंकरसिंह और आनन्दराव आदि सबको प्रेम की डोरी में रखते हुए कुछ कार्य कर जाओ। शेष कुशल है। यदि जीवन रहा तो बसंत पर आऊँगा अन्यथा मौज मालिक।

—❀—

शब्द महिमा (दाता दयाल)

शब्द है आधार सबका, शब्द का तू ध्यान कर।
शब्द के साधन में लग जा ,उसकी महिमा जान कर॥
शब्द ब्रह्मा, शब्द विष्णू, शब्द शिव का रूप है।
शब्द को मथकर परखले, दूध जल को छान कर॥
ब्रह्म क्या है? शब्द है, परब्रह्म क्या है? शब्द है।
गुरु का सत्संग कुछ दिनों हो, शब्द का अनुमान कर॥

शब्द में है नाम और, इस शब्द में ही रूप है।
सुन गुरु के शब्द निश दिन, शब्द का सम्मान कर ॥
शब्द तू है, शब्द मैं हूँ, शब्द सब का सार है।
शब्द बाहर शब्द भीतर, शब्द की पहिचान कर ॥
शब्द को समझा नहीं, फिर काल और माया का डर।
शब्द अमृत घूँट है, इस शब्द का तू पान कर ॥
धन्य सतगुरु राधास्वामी, ज्ञान का परिचय दिया।
शब्द की डोरी पकड़ चल, शब्द में स्थान कर ॥

कर्मभोग अथवा मौज (परम दयाल जी महाराज)

चूँकि मैंने प्रण किया था कि जीवन में जो कुछ अनुभव होगा उसे बता जाऊँगा। यह विचार क्यों उत्पन्न हुआ ? राधास्वामी मत में सम्मिलित होने के कारण और उसके विचारों से। इस लिये लिख रहा हूँ।

कल रात्रि को स्वप्न में मैंने ५ साधु गेरुवे वस्त्र पहिने हुये देखे। वह मुझ से दीक्षित होना चाहते थे परन्तु साथ ही यह कहते थे कि किसी को पता न बताओ, मैंने कहा यह असम्भव है। इसी प्रकार रात्रि को सतसंग कराता रहा।

आज रात्रि को स्वप्नावस्था में बसरा बग़दाद अपनी रिज़र्व गाड़ी में यात्रा करता रहा और लगेट स्टेशन पर तार घर का निरीक्षण करता रहा।

कई बार रात्रि को रेल गाड़ियों को देखता हूँ। स्टेशन मास्टरी करता रहता हूँ। एक रात्रि को हुज़ूर सन्त कृपालसिंह जी महाराज आये। बातें होती रहीं। वह याद नहीं हैं। कई बार हुज़ूर दयाल नन्दू भाई जी महाराज आते हैं। दाता दयाल का स्वरूप भी वर्ष में एक दो बार आता है। कभी स्वप्न में साधन, अभ्यास करता हूँ। कभी स्वप्न को स्वप्न समझता हूं।

आज प्रातः उठा। समाधि में चला गया। मन नहीं लगा। विचार हुआ यह स्वप्न जो वास्तव में वही संस्कार जो मस्तिष्क पर पड़े हुये होते हैं उनका ही परिणाम हैं। खेद और शोक हुआ कि यह आयु बीत गई। इस मन से निकलने का प्रयत्न भी किया परन्तु निकला नहीं गया। जाग्रति अवस्था में साधन के समय अवश्य निकल जाता हूं, अथवा यह जाग्रति में मेरे नियंत्रण में रहता है।

हाँ! याद आया कि यह विचार इस कारण भी हुआ कि आज रात्रि को जब गाड़ी में यात्रा कर रहा था तो एक कुरूप ९ वर्ष की कन्या मेरी गाड़ी में आगई। मैंने चाहा भी कि वह चली जाय परन्तु वह नहीं गई, वह गाती थी और मुझे गाना सुनाती थी। आज प्रातः मन पर उदासी थी। यद्यपि यह जानता था सब खेल काल भगवान का है।

बंभा ने बालक जाया। जिन सकल जीव भरमाया॥
अज्ञानी नाम कहाया। जिन माया सकल उपजाया॥ (स्वामी जी)

मुझे स्मरण है कि मैंने दो पत्र हुज़ूर साँवलेशाह को फ़रीदकोट से लिखे थे, कि मुझे अभी तक स्वप्न आते हैं क्या वह आपको भी आते हैं? परन्तु कोई उत्तर नहीं आया। अब यही प्रश्न वर्तमान महा पुरुषों से करता हूं।

पता नहीं जब तक इस पिण्ड देश में रहना है, यह ऐसा ही होता रहेगा अथवा बन्द हो जायगा। रात्रि को बहुत कम सोता हूं। स्वास्थ्य भी अच्छा है। केवल चार बार लघुशंका को जाना पड़ता है। दिन में काम करता हूँ। अपनी आयु वालों से अधिक श्रेष्ठतर हूँ।

और तो बहुत कुछ मैंने समझा। इस सन्त मत की खोज का अन्त कर दिया। परन्तु इन स्वप्नो से नहीं बच सका।

सम्भव है अन्य अभ्यासियों को भी स्वप्न आते हों। और वह अपने स्वप्नों से दुखी तथा सुखी होत हों। इसलिये जो मेरी दशा

होती है वह वर्णन कर रहा हूँ। साधन अभ्यास चालू रहता है। वास्तव में यह स्वप्न हैं क्या ? भाव, विचार और संस्कार जो चिद आकाश पर पड़े हुए होते हैं वही फुरते और प्रकट होते रहते हैं।

उस दिन की आशा लग रही, जिस दिन तन मन से हूंगा बखरा।
यह खेल काल व माया का है, जीव है इसमें जकड़ा॥
तन के रहते शायद छुटूँ ना, फिर हो जाऊँगा बखरा।
कोशिश हरदम यही है रहती, मर जाये मन रूपी बकरा॥

अनेक बार विचार होता है कि संसार क्या है ? स्वप्न ! जाग्रत भी स्वप्न है और स्वपन तो स्वप्न है ही। मैं साधन करता हूं। प्रकाश और शब्द भी क्या है ? संस्कार ही तो है। मुझ से ही उत्पन्न होता है। सन्त कबीर ने कहा है १४ लोक में काल बसता है। फिर इससे आगे क्या है ? १४ लोक तो देख लिये।

आगे है अकह अगाध अकाल स्वामी।
जहाँ नहीं तन न मन न कोई दृष्यि दवामी॥
आप आप में वह रहे खुद आपे।
उसकी सत्ता से यह सब जग व्यापे॥

फिर यह जीवन क्या है? लब खुले और बन्द हुए। यह सब खेल काल और माया का है। इसमें वह स्वयं ही साक्षी बनता है। गुरु ज्ञान मिल गया। खेल चलता है। किन्तु खेल के दुःख सुख का भान नहीं होता। क्योंकि ज्ञान मिला हुआ है। यह समस्त रचना काल और माया की है। जब तक मौज है। खेल में खिलाड़ी बन कर प्रत्येक जीव खेलता है। यदि गुरु ज्ञान मिला हुआ है तो दुःख सुख नहीं उठाना पड़ता वरन दुखी सुखी होता रहता है। इस अनुभव के हो जाने का नाम जीवन मुक्ति अथवा विदेह गति है।

इस समय तक तो यही बात समझ में आई है। साधन करता रहता हूं। यदि कुछ और बात समझ में आई, वह भी कर्म भोग वश बता जाऊँगा। अब दिन के ८ बज गये। वह रात्रि के स्वपन

के प्रभाव लोप हो गये। मैं जिज्ञासू की स्थिति में लिख रहा हूँ। क्या संत कृपालसिंह जी अथवा दयाल नन्दू भाई जी महाराज तथा अन्य महा पुरुष इससे अधिक प्रकाश डाल सकते हैं ?

संसार वालो ! न गुरु हूँ, न मैं हूं, अब चेला ।
जहाँ में आया बन कर फ़क़ीर, और खूब हूं खेला ।।
खेल का जो अनुभव हुआ, वह जगत को हूं लिखता रहता ।
मौज ने ऐसा बनाया, और आप लोगों से हुआ मेला ।।
न ख्वाहिश है मेरी कोई सुने, न सुनवाने का है ठेका ।
यह ज़िन्दगी ख्वाब इक निकली, ख्वाब में ख्वाब का मेला ।।
वह घर जो अपना असली है, अनुभव उसका हो गया हमको ।
मगर दायमी नहीं बासा, इस तन मन का है अभी झमेला ।।
लगी रहती है हरदम आस, मुझको यह मेरे मित्रो ।
कि जाऊँ अपनी जात में अब, न लौटने का रहे अब खेला ।।
जो है मौज मालिक की, वही हम सबसे कराता है ।
उसी का बस सहारा है, छुटा अब सब वायवेला ।।

कर्म भोग अथवा मौज [ले० परमदयाल जी महाराज]

अहा ! इस संसार के मित्रो ! मेरे लेखों और विचारों को पढ़ कर हंसना नहीं और न ही मुझे कोसना ।

मुझे बाल्य अवस्था से ही उस मालिक, परम तत्व, सर्वाधार जो कि है उसके मिलने की खोज थी । मेरे अस्तित्व का क्षोभ मुझे संतमत में ले आया। इन महापुरुषों की वाणी का प्रभाव मस्तिष्क पर था और मैं प्रत्येक बात को क्रियात्मक रूप से देखना और अनुभव करना चाहता था । आजकल मेरे मस्तिष्क की दशा विशेष प्रकार की हो गई है । बहुधा अपने आप को ही नहीं वरन् संसार को भूला रहता हूँ । सुमिरन, ध्यान और भजन से परे एक अवस्था में रहता हूँ । ऐसा क्यों हुआ ? मेरी खोज के परिणाम के कारण ।

शम्सो क़मर, शब्द, प्रकाश, मेरी ज़ात में हैं पिन्हाँ।
जब चाहूँ इनको बना लूँ, जब चाहूँ मेंटूँ निशाँ ॥
अक़्ल, मन, चित, अहंकार, मेरे ही अपने खेल थे।
ग़लती में पड़ करके रहता था, इन से खुद ही परेशाँ ॥
आप अपनी बनाके दुनियाँ, मैं आप ही था उसमें खेलता।
तलाश ने मुझको साबित किया, कि मेरी ज़ात है लामकाँ ॥

किन्तु जब चेतन्यता आती है। यह जगत स्थिति है। सूर्य, चन्द्रमा और संसार समस्त विद्यमान है। मैं अथवा मेरी ज़ात यदि सर्वव्यापी है तो ऊपने ही आपसे न कि संसार के विचार से।

सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल का हिदायत नामा और सत्त कबीर की उच्च कोटि की शिक्षा जो कुछ मैं कह रहा हूं उसकी अन्य शब्दों में पुष्टि करती है। स्वामी जी कहते हैं। संत,ईश्वर परमेश्वर, ब्रह्म, परब्रह्म से ऊँचे हैं बल्कि वह हिदायत नामे में लिखते हैं कि उनके उत्पन्न करने वाले हैं। जहाँ तक मेरी निज खोज का संबंध है। वाणी सत्य है। किन्तु एक विशेष दृष्टिकोण से दाता दयाल ने मेरे नाम एक शब्द लिखा था।

तू है क्या ? तू मर्क़ज़े आलम है ऐ मर्दे फ़क़ीर।
गिर्द तेरे फिर रही है, दुनियाँ होकर के असीर ॥

इसका भी यही भाव है। किन्तु क्या मैं किसी का कुछ भला कर सकता हूँ ? यह एक प्रश्न है जो बार बार मेरे अन्तर में चेतन्यता के समय उठता रहता है। इसलिये चाहता हूं। प्राणी-मात्र को शांति। भारतवर्ष में मानवता का राज्य। राजा प्रजा सुखी रहें। यदि ऐसा नहीं होता है तो ऐ संसार वालो यह संतपना केवल एक मस्तिष्कीय, मानसिक और आत्मिक शान्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं हे ! संतों ने रोचक बाते कही हैं। संसार इन पुस्तकों और वाणियों को पढ़ कर त्रुटि पूर्ण समझ से उन्मत्त हो गया,

मैं स्वयं उन्मत्त हो गया था संभव है संसार मुझे इस वर्तमान दशा में उन्मत्त समझे। परन्तु इस समय मैं सुमस्तिष्क हूँ। यद्यपि इस से पूर्व मैं प्रतीति करता हूं कि सुमस्तष्कि नहीं था।

वर्तमान जगत के धार्मिक और पान्थिक आचार्य, देशीय सामाजिक नेता ठन्डे हृदय से निज अनुभव के आधार पर सोचें कि मैंने क्या लिखा है ? आज़माइश शर्त है। संत, फ़क़ीर और ब्रह्मज्ञानीं आदि की बड़ी महिमा सुनता था। यह तो ठीक है इस मेरी वर्तमान दशा में मैं मेर और तेर, मैं और तू, दुख और सुखों से बच गया। अन्य शब्दों में मानसिक और आत्मिक उन्मत्ता से जो दुःख सुख उठाता था उससे बच गया हूं। क्यों कि मस्तिष्की दशा में परिवर्तन आ गया है और चूँकि मैं स्वयं अचिंत, निर्भय और निर्द्वन्द अवस्था में रहता हूं। हो सकता है कि दूसरों को मेरी रेडियेशन से लाभ पहुँच सकता हो, जैसा कि अनेक मित्र कहते हैं।

मेरी संगत से शान्ती अवश्य मिलती है आज़मा लिया।
मगर मिलती है उनको जिनको हो इच्छा दोस्तो यह सत कहा ॥

जगत के कल्यान का था संस्कार मेरे दिमाग़ पर।
उसके लिये मैंने बहुतसा है यतन किया ॥
काम्याबी हुई नहीं अभी तक सोचता हूं बार बार।
जगत के कल्यान की ख़ातिर क्या कर्म करना बाक़ी रहा ॥

एक तो अपनी भावना, विचार तथा हित देता हूं। दुखी संसार वालों को कहे जाता हूं कि "मनुष्य बनो" मानवता के नियमों पर चलो। यह जीवन क्या है ? क्षण भंगुर है। क्यों इसके लिये असत्य मार्ग ग्रहण करके प्राणी अपनी और दूसरों की हानि करे।

मैंने इस मार्ग पर यात्रा करके देख लिया। अपनी खोज का परिणाम वर्णन कर दिया :—

भव का जाल सिमट गया, नहीं कुछ इसमें शक।
बाक़ी बातें न आज़मा सका, कहता हूं सत का सत॥

इसलिये ऐ मानव जाति! तुममें से जो संसार का कल्याण चाहते हैं अब क्षेत्र में आयें। "भगवान उन की सहायता करते हैं जिनमें साहस होता है"। काम करो। जीओ और जीनो दो। ग़लत लोभ, मोह और अहंकार को त्यागो। प्राणी प्राणी के काम आवे।

यही है इबादत यही दीनो ईमाँ।
कि काम आये दुनियाँ में इंसाँ के इंसाँ॥

प्रत्येक व्यक्ति का जीवन एक चेतन का बुलबुला है। उसकी ज़ात निससंदेह सर्वव्यापी, अलख, अगम, अनामी और अकाली है। बात को समझो, और मानवता के लिये कर्म करो, कर्म करो और कर्म करो।

जो मेरे विचारों से सहमत हैं उनसे चाहता हूं कि मानवता के क्षेत्र स्थापित करें। थोड़े ही मनुष्य क्यों न हों कोई बात नहीं। परस्पर प्रेम रखते हुए, सुख शान्ति का जीवन व्यतीत करते हुये दूसरों को सुखी और प्रसन्न रखने का यत्न करें। धार्मिक और पान्थिक द्वेष और पक्षपात त्यागें। समस्त प्राणी भाई भाई हैं। मौज मालिक सहायता करेगी और यह मानवता का विचार फैल कर रहेगा। जबतक कोई सर्वव्यापी अवस्था तक नहीं पहुंचता। सतगुरु दाता दयाल, अकाल पुरुष का सहारा और विश्वास रखते हुये चलें। सत्तपुरुषों का सतसंग रहे। जब तक पूर्ण अनुभव न हो, सुरत शब्द योग का साधन और अभ्यास करता रहे। एक दिन लक्ष्य की प्राप्ति कर लेगा।

कलाम (दाता दयाल)

जो हुआ मोहताज ग़ैरों का, वह कब इन्सान है।
वह है हैवानों से बदतर, क्योंकि वह नादान है॥

आदमी में आदमियत चाहिये, यह है उसूल ।
आदमियत से जो हो खाली, बेसरो सामान है ।।
उसमें हिम्मत हौसला हो, इश्क में साबित क़दम ।
हो फ़राखी दिल को हासिल, तब बशर ज़ीशान है ।।
जिसमें है मोहातजगी, होगा ज़माने में ज़लील ।
क़ाबिले रुतबा है, जिसमें बढ़ने का अरमान है ।।
ग़ैर मुमकिन, को करे मुमकिन, बशर की यह सिफ़त ।
आलमे इम्कान में, हर बात का इम्कान है ।।
राधा स्वामी की बदौलत, राज़ सरबस्ता मिला ।
है बशर शाने रबूबत, रब की वाहिद शान है ।।
ज़र्फ़ दिल गहरा हो, कमज़रफ़ी की आदत छूट जाये ।
हो रहा है जो, उसी हालत में दिल को चैन आये ।।
बेफ़िक्र होकर रहो, होने दो जो होता यहाँ ।
दिल में हो तस्कीन हासिल,सम्ता ना चिन्ता, रंग लाये ।।
राधा स्वामी की दया से, सबका बेड़ा पार हो !
जिस तरह मालिक रखे, खुशदिल रहे और चैन पाये ।।

वहम है एक, और वहम हैं दो चार, वहम से वहमी को मुसीबत है ।
आदमी हो तो, आदमी बन जाओ, आदमी को यहाँ फ़ज़ीलत है ।।
कुछ मक़सद लेकर आता है, इस दुनियाँ में जो आता है ।
महरूमे अमल जो आता है, वह जीते जी मर जाता है ।।
इस मज़रये आलम को सींचो तुम, जद्दो जहद की बारिश से ।
जो बीज अमल का बोता है, वह फल राहत का खता है ।।
दरिया की तरह जो चलता है, और फिर चलता ही रहता है ।
मैदानों को कुहसारों को, वह कब खातिर में लाता है ।।
हर एक मुसीबत दुनियाँ की, पैग़ाम खुशी का लाती है ।
गुलशन में खिजाँ का आना ही, उम्मीदें बहार दिलाता है ।।
हर रात के पिछले हिस्से में, कुछ दौलत लुटती रहती है ।
जो सोता है वह खोता है, जो जागता है वह पाता है ।।

मनुष्य बनो के नियम

१---शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिकता के नियमों पर वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है।

२---सन्त महात्माओं और ऋषियों की बाणी को सरल सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३---सामाजिक, उन्नति कारक, तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४---किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५---यह पत्र हर मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६---लेखों को घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जायँ।

७---ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नंबर व पता साफ़ साफ़ लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जवाबी कार्ड आना चाहिए।

८---यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुचे तो पहले अपने यहाँ डाकखाने से पूछ ताछ करके वहाँ से जो उत्तर मिले वह अगला अंक निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य जासकेगी अन्यथा नहीं।

९---नमूना ।) के टिकट मिलने पर ही भेजा जा सकेगा।

१०---एक वर्ष से कम के ग्राहक नहीं बनाये जायँगे। जो किसी भी मास से बन सकते हैं।

११---प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजने चाहिये मनिआर्डर कूपन पर अपना पता साफ़-साफ़ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी।

मैनेजर-**गुन्शीलाल गोविल** (विश्वप्रेमी) मजिस्ट्रेट प्रथमश्रेणी बेंच
"मनुष्य बनो कार्यालय" (दयाल कम्पाउण्ड, पेच जामाजो)
यू० एस० जैन रोड, अलीगढ़ (उ० प्र०)

हमारे यहां की पुस्तकें

१–मनुष्य बनो हिंदी ॥=)
२–जागृत जोवन ,, ॥।)
३–मानवधर्म प्रकाश उर्दू १॥)हिंदी॥।)
४–सन्तमत सार हिंदी १)
५–फ़क़ीर शव्दावली ,, ॥=)
६–आत्मिक आदर्श ,, ॥।)
७–राधास्वामी मत ,, ।=)
८–आकाशीय रचना उ.॥),हिंदी॥)
९–सार भेद ,, ॥) ,, ॥=)
१०–शब्द सार ,, ॥।)
११–मनोकामना देवी ।=)
१२–नय्यरे अनवर उर्दू ॥।)
१३–आवागमन ,, ॥।) हिंदी १)
१४–सदाये फ़क़ीर ,, ।=)
१५–हयाते नौ ,, ।)
१६–सचाई ,, ।)
१७–विष्णु संहिता हिन्दी १॥)
१८–शिव संहिता ,, १॥)
१९–बेफिक्री उर्दू ॥।)
२०–दयाल संहिता ,, ॥।)
२१–सुमेरु पर्वत हिन्दी १॥)
२२–दातादयाल शब्द संग्रह हिंदी॥=)
२३–योगी हिन्दी ।)
२४–शकुन विद्या हिन्दी =)
२५–दस अवतार तिरंगा =)
२६–परमार्थ सुधार हिन्दी ॥।)
२७–गृहस्थी गुरु उर्दू ॥।)
२८–भाग्य को बढ़ाओ हिन्दी ।)
२९–निष्कलंक अवतार हिंदी उर्दू ॥)
३०–विश्वहितैषी उ. १॥) विश्वप्रेमी ॥)
३१–तरक्क़ी का राज़ उर्दू ।=)
३२–जगत कल्याण, जगत निस्तार
३३–जगत उद्धार उर्दू २) १॥) १।)
३४–यथार्थ शांति संदेश उर्दू ॥) हिन्दी ।)
३५–क़ानूने ख़याल हिन्दी १)
36--Message of Peace 0-10-0
37--Truth & Reality 0- 6-0
38--Independence Day Leaflets 0- 2-0
39--Real Independence 0- 5-0
40--Letters of Data Dayal 0-12-0
41--Light on Anandyog 0- 3-0

प्रकाशक व मैनेजिंग एडीटर
मुन्शीलाल गोविल (विश्वप्रेमी)
"मनुष्य बनो कार्यालय"
दयाल कम्पाउण्ड, पेच जामा जी
यू० एस० जैन रोड, अलीगढ़।

Regd. No. A 665

कृपया न मिलने पर निम्न पते पर लौटा दें :—

ग्रा० संख्या

"मनुष्य बनो कार्यालय"
दयाल कम्पाउण्ड, पेच जामाजी अलीगढ़ (उ० प्र०)

श्रीमान्.......................................
....